RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

भारतीय संस्कृति का प्राणः संगीत

रूचि रानी गुप्ता

शोध छात्रा (SRF) संगीत एवं प्रदर्शन कला विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

हमारा भारतवर्ष सदैव से ही अपनी संस्कृति के लिए विश्वविख्यात रहा है। भारतीय संस्कृति का सम्मान हमारा प्राचीनतम इतिहास भी करता है। भारतीय संस्कृति का संगीत से सम्बन्ध होने के कारण समय–समय पर अनेक प्रकार के सांस्कृतिक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक और धार्मिक प्रभाव भी भारतीय संगीत पर पडते रहे हैं। हर एक देश के संगीत पर उस देश की अपनी राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का प्रभाव पड़ता है इन सभी विशेष प्रभावों के फलस्वरूप संगीत अपनी विशिष्टता बना लेता है। भारतीय संगीत इन सभी परिस्थितियों का सामना करके ही आज इस शिखर पर पहुँचा है। इतिहास ने भी हमारे भारतीय संगीत का बखान व गुणगान किया है। हमारा भारतवर्ष तो सर्वदा ही अपनी संस्कृति के लिए विश्वविख्यात रहा है। हमारी संस्कृति का संगीत पर जो प्रभाव है वह सार्वभौमिक है। प्रारम्भिक सभ्यता में वैदिक संगीत की जो लोक धारायें प्रचलन में थी, उन लोक धाराओं को सर्वप्रथम भरतमुनि ने शास्त्रीय दृष्टि से संकलन कर संगीत के शास्त्र की रचना की थी। आचार्य भरत मुनि जी के बाद के विद्वानों ने ही संगीत का विश्लेषण कर ग्रन्थों का रचना का प्रारम्भ किया था। विद्वानों ने भारतीय संस्कृति में संगीत को एक विकासशील कला के रूप में मानकर उसमें नये–नये आयाम जोड़ते गये और इसी प्रकार संगीत का शास्त्र समृद्ध हो सका है।

भारतीय संगीत अति प्राचीन है जिसकी जानकारी हमें वैदिक और पौराणिक ग्रन्थों में प्राप्त होती है। जिस प्रकार चीन व ग्रीक देशों की संस्कृति पुरातन है उसी प्रकार भारत की संस्कृति भी पुरातन है। भारतवर्ष की सभ्यता का परिचय भारत की सभी कलाओं के अवशेषों से ही प्राप्त होता है। भारतीय ऋषि, मुनियों ने सृष्टि की उप्पत्ति ही नाद–ब्रह्म से मानी है। जहाँ–जहाँ भी संसार में जीवन है वहीं नाद है अर्थात् ध्वनि है। हमारें शास्त्रों में नाद को आकाश का गुण कहा गया है। द्वितीय शताब्दी में महर्षि भरत ने अपने ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में नाद की उत्पत्ति के विषय में कहा है–

आत्मा विवक्षमामाणोडयं मन प्रेरयते मनः।
देहस्थ वहिमाहन्ति स प्रेरयति मारूतम्।।
ब्रह्म ग्रन्थि स्थितस्सोऽयं कृमावूर्ध्वपथे चरन।
नाभि हरकंठ मूर्धास्येष्वाविर्भावयते ध्वनिम।।

बोलने की रक्षा रखने वाली आत्मा मन को प्रेरणा देती है। मन के द्वारा अग्नि को प्रेरणा मिलती है। यह अग्नि वायु को प्रेरित करती है। ब्रह्मग्रन्थि में स्थित प्राण (वायु) तथा अग्नि के संयोग से नाभि, हृदय, कंठ, सिर तथा तालु को स्पर्श करता हुआ नाद उत्पन्न होता है। नाद के द्वारा ही एक सफल संगीतकार अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति कर सकता है। वैसे तो प्रत्येक कलाकार की कलाओं का महतव होता है परन्तु अन्य कलाओं की अपेक्षा संगीत का मूर्ताधार अधिक सूक्ष्म है। सा, रे, गा, मा, पा, धा ,नी, इन सातों स्वरों के सूक्ष्म माध्यम से संगीत में एक कलाकार अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति कर पाता है। भक्ति आर्य संस्कृति का मूल तत्व हैं। मनुष्य के जीवन का लक्ष्य है परम साध्य अर्थात् अखण्ड आनन्द, जिसकी प्राप्ति का सुख ही मोक्ष है। मोक्ष धाम पहुँचने की सबसे सरलतम दिशा है– ''भक्ति''। वर्तमान में ही नहीं अपितु वैदिक काल में भी इस विषय पर विस्तृत विचार हुये है।

''ईश्वर में अनुरक्ति ही भक्ति है''।।[1]
''भक्ति परम प्रेम रूप है''।।[2]

इन दोनों ही भक्ति सूत्रों के अनुसार ईश्वर में प्रेम और अनुरक्ति ही भक्ति है। साहित्यिक क्षेत्र में भक्ति सम्बन्धित अनेक मत है किन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र में इसकी श्रेष्ठता और महत्ता निर्विवाद हैं आध्यात्मिक क्षेत्र की उपलब्धिता ही साहित्यकारों के लिए भी आकर्षण केन्द्र बनी और अन्त में रसशास्त्र में इन्हें महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। श्रृंगार रस का स्थायी भाव रति माना गया है। रस शास्त्र में भक्ति का स्थायी भाव भी रति माना गया है। इन दोनों में मात्र इतना अन्तर हैं कि जहाँ भगवद्विषयक रति भाव के लिए स्थायी भाव बन जाती है वही कान्ता विषयक रति श्रृंगार की जननी होती है। भक्ति मर्मज्ञों के अनुसार संक्षेप में कह सकते है कि जिस प्रकार, मनुष्य में अपनी स्त्री, पुत्र, धन आदि में आसक्ति मोह व ममता होती है वही यदि ईश्वर को ओर उन्मुख हो जाये तो भक्ति बन जाती है।

प्राचीनकाल से ही भारतवर्ष में भक्ति संगीत की परम्परा का प्रचलन रहा है। भक्ति संगीत के माध्यम से एक संगीतज्ञ अपनी भावनाओं को ईश्वर के प्रति सहजता से आत्मविभोर होकर प्रकट करते है। रामायण, महाभारत, पौराणिक एवं वैदिक काल में अनेक ऋषि मुनियों ने अनेक तालों एवं रागों में निबद्ध होकर अनेक रचनाये की। गुरू नानक देव ने शक्ति का द्वार ही ईश्वर को बताया हैं लयात्मकता के कारण ही ''गुरू ग्रन्थसाहिब के पद अपनी लयात्मकता के कारण लोगों को मंन्त्रमुग्ध कर देते हैं। और इस प्रकार कवि का कथ्य अपने आप समझ में आ जाता है।

''हरि जु राख लेहुपत मेरो।
काल को त्रास भयों उरंतर, सरन ग्रह्यो प्रब तेरो।
भय करन को बिसरत नाही, तेहि चिन्ता तन जारो।
किये उपाय मुक्ति के कारन, दस दिसि को उठि धाया।
घट ही भीतर बसै निरंतर, ता को मर्म ना पाया।
नाहीं गुन नाही कछु जप तप, कौन करम अब कीजै।
नानक हार पर्‌यो सरनागत, अभय दान प्रब दीजै।''[3]

RRIJM 2015, All Rights Reserved

हर तरफ से थका हारा मनुष्य ईश्वर की शरण में जाकर शक्ति पाना चाहता है। यह शरणागत प्रपत्ति का बहुत ही सुन्दर उदाहरण हैं। तुलसी ज्यों–त्यों चरण शरण पाये, वाली भावना यहां 'नानक हार पर्‌यो सरनागत, अभय दान प्रभु दीजे, में मिलती है। ईश्वर की उपासना के माध्यम से बने पद–चाहे वह सगुण धारा की कृति हो अथवा निर्गुण धारा के कवियों की, मन के कलुष को समाप्त करने में सहायक है।

भक्ति संगीत का वातावरण बनाने का श्रेय गीत गोविन्द नामक प्रबन्ध के रचयिता जयदेव जोकि भक्ति के कवि थे, उनको भी जाता है। इन्होंने राधाकृष्ण की प्रेम लीलाओं की भक्तिमय अष्टपदियों को स्वर ताल एवं लय में बद्ध कर भक्ति तथा संगीत का मिश्रण किया। वैष्णव विद्यालय में आज भी भक्ति गायक इन अष्टपदियों का रागबद्ध पदगायन करते है।

सूरदास जी शास्त्रीय संगीत में पारंगत थे। उन्होंने अपनी पुष्टिमार्गीय सेवा निधि का शास्त्रीय गान पद्धति से सामंजस्य स्थापित किया इनकी रचनाओं में कृष्ण भगवान की बाल्यावस्था की लीलाओं का वर्णन प्रत्यक्ष रूप से वात्सल्यपूर्ण श्रृंगार तथा परोक्ष में भक्ति में ही निहित था।

करि मन नंद नंदन ध्यान।
सेई चलन सरोज सीतल, तजि विषै–रस–पान।।[4]
ग ग ग ग ग
निरखति अंक श्याम सुन्दर के बार–बार लावति ले छाती।
लोचन जल कागद तसि मिलि कै, हवै गई स्याम, स्याम जु पाती।
ग ग ग ग ग
मैया मोरी मैं चंद खिलौना लै हौ.....।।[5]

भक्ति संगीत को सदा ही उच्च स्थान प्राप्त हुआ है और भविष्य में भी होता रहेगा। गम्भीर सागर की तरह अनेक उपासना पद्धति–रूपी पवित्र नदियों के जल को आत्मसात् कर अपनी शान्ति प्रदायक लहरों साधकों को सदा प्रेरित करता हुआ भक्ति संगीत सदा भगवान के इन वाक्यों का स्मरण कराता रहेगा।

नाहं वसामि बैकुंठे योगिनां हृदये न च।
मद् भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारदः।
मत्पुराणकथाश्रुत्वा मदभक्तानां च गायनम्।
निन्दन्ति ये नरा मूढ़ास्ते मद्देष्या भवन्त हि।।
(मदपुराण, उ0–94/21–25)

अर्थ भगवान विष्णु कहते है–हे नारदो न तो मैं बैकुंठ में रहता हूँ और न योगियां के हृदय में। मेरे भक्त जहाँ गायन करते है वही मैं निवास करता हूँ। जो मूढ़ मानव मेरी पुराणकथा और मेरे भक्तों का गायन सुनकर निन्दा करते है, वे, मेरे द्वेष के पात्र होते है।

भक्तिकालीन कवि सूरदास के रचयिता एवं गीत कात्य के प्रकांड विद्वान महात्मा सूरदास, रामचरित मानस के यशस्वी लेखक गोस्वामी तुलसीदास हिन्दू, मुस्लिम एकता के प्रतीक संत कबीरदास तथा सुप्रद्धि कवियत्रि और भजन गायिका मीराबाई द्वारा भक्तिपूर्ण काव्य के प्रचार से संगीत कला भगवत प्राप्ति का साधन बनकर उच्चतम शिखर पर पहुँची।''[6]

तुलसीदास का नाम भी इस दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भक्ति और दर्शन से ओत–प्रोत उनकी सुप्रसिद्ध रचना ''विनय प्रत्रिका'' में 22 रागों का प्रयोग हुआ है आसाबरी, कल्याण, कान्हणा, केदार, गौरी, जैतश्री, तोड़ी, घनाश्री, नट, बसन्त, बिलावल, बिहाग, भैरव, भैरवी, मल्हा, मारू, रामकली, ललित–विभास, सारंग, सूही बिलावल, और सोरठा। इसके प्रारम्भिक लगभग पैसठ पद विभिन्न देवी देवताओं की स्तुतियों से सम्बद्ध है। विनय पत्रिका का पहला पद–

गाइये गनपति जगबंदन। संकर सुवन भवानी नंदन।।
सिद्धि सदन गज बदन विनायक। कृपा–सुन्दर, सब लायक।।
मोदक प्रिय मुद–मंगल दाता। विद्या–बारिधि–बुद्धि विधाता।
मांगत तुलसीदास कर जोरे। बसहिं राम सिय मानस मोरे।।

जहाँ गणेश ''वंदना'' की दृष्टि से महत्वपूर्ण है वहीं संगीत प्रेमियों को मुंत्रमुग्ध कर देता है राग बिलावल में निबद्ध यह पद शास्त्रीय नियमों के अनुरूप है। राग विलावल गम्भीर प्रकृति का राग है। रस और समय की दृष्टि से भी यह राग ठीक है।

जप–तप, यम–नियम आदि तो भक्ति के शुष्क प्रकार है, जिनसे भोग और दर्शन तो प्राप्त हो सकते हैं, पर ईश्वर का सान्धिय तो केवल उनके गुणों को गाकर ही प्राप्त किया जा सकता है–

''जो सुख होत गोपहि गाये,
सो सुख नहिं जप–तप कीन्हैं
कोटिक तीरथ न्हाए।।

पुराणों में प्राप्त अनेक स्त्रोत भक्ति संगीत के ही रूप है। स्त्रातों को सस्वर गाने की विधि भी परम्परा प्राप्त है। मानसिक जप उत्तम माना गया है और स्त्रोत का सस्वर गान करने के नियम बनाये गये है। भगवदपद शंकराचार्य द्वारा रचे हुये अनेक स्त्रोतों में संगीत के पर्याप्त तत्व प्राप्त होते है, जिनके सस्वर गान से मानसिक शान्ति मिलती है। रावण द्वारा रचित ''शिवतांडव स्त्रोत'', गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित– ''रूदाष्टक'' तथा ''विनय पत्रिका'', व रामचरित मानस के स्त्रोत संगीतात्मक है। ''शिवमहिमन्स्त्रोत'' का सस्वर गान करने की परिपाटी आज भी अत्यन्त प्रचलित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अथातो भक्ति जिज्ञासा।।1।।
   सापरानुरकित रीशवरे।।2।। (शांडिल्य भक्ति सूत्र)
2. अथातो भक्ति व्याख्या स्यामः।।1।।
   सा त्वस्मिन परमप्रेमरूपा।।2।। (नारदीय भक्ति सूत्र)
3. हिन्दी के जनपद संत पेज–46

4. संगीत जुलाई–2010
5. सूरसागर–नख सिख शोभा का पद
6. संगीत विशारद बसन्त पृष्ठ–24

RRIJM 2015, All Rights Reserved